स्मृति ग्रंथ

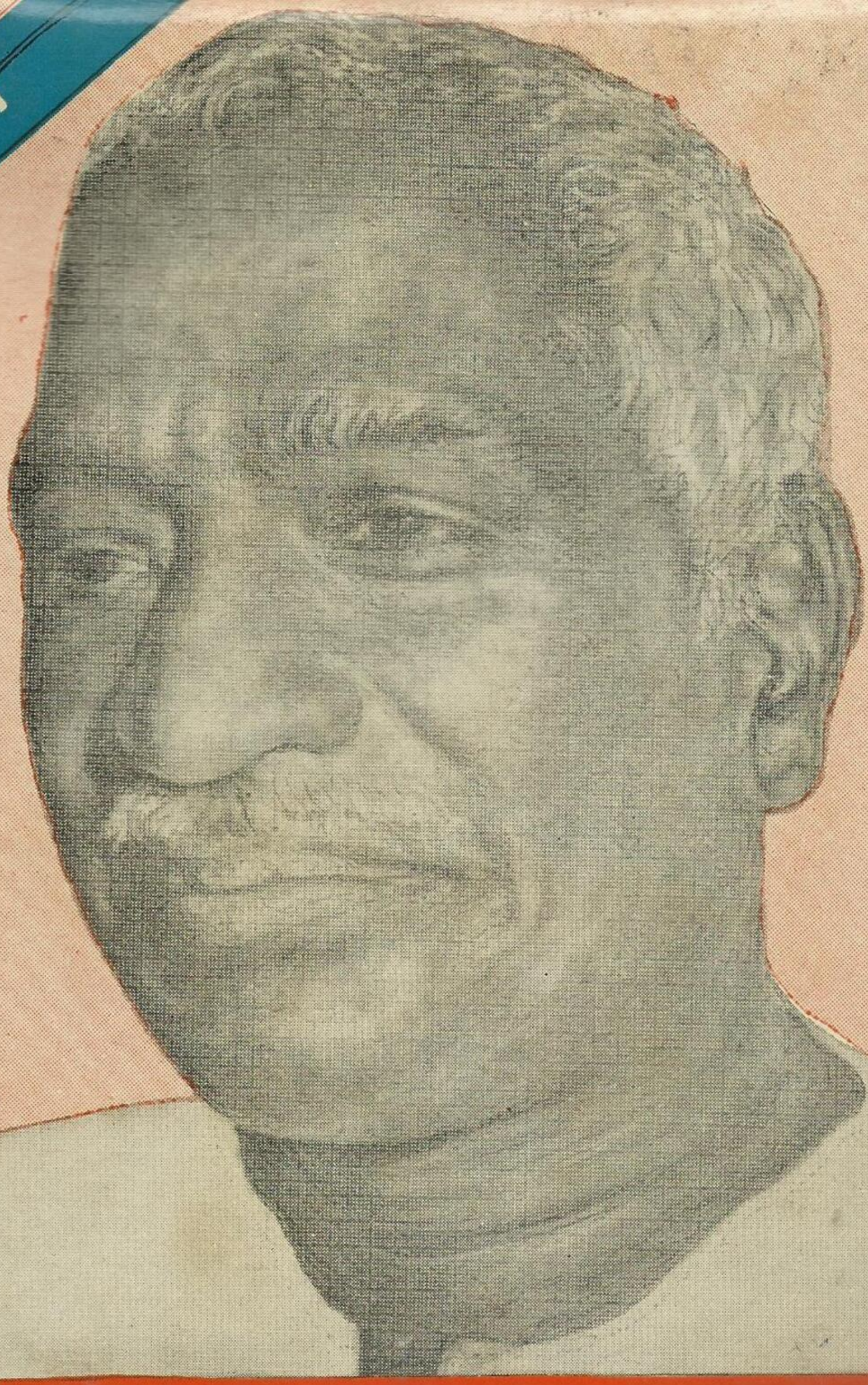

बड़े भाई

दहलीज पर

"Slowly and sadly we laid him down.
From the field of his fame fresh and gory.
We carved not a line, we raised not a stone.
But we left him alone with his glory."

(From The Burial SJM)

"तान् प्रति नैष यत्नः" ।

"दहलीज पर" लिखने के लिए बैठा हूं ।

एक वाक्य का तीव्र स्मरण हो रहा है ।

कुमेरी की लड़ाई में मल्हारराव होलकर की आंखों के सामने उनका पुत्र खंडेराव तोप के गोले से मारा गया ।

शोकविह्वल मल्हारराव ने कहा, "वास्तव में मेरा श्राद्ध तुम्हें करना चाहिए था, आज मैं तुम्हारा श्राद्ध कर रहा हूं ।"

दिल की गहराई के उत्कट भाव दिल वाले ही समझ सकते हैं, कम्प्यूटर नहीं समझ सकता ।

न ही समझ सकते हैं वे व्यवहारचतुर पुरुष जो सम्पर्क में आने वाले सभी व्यक्तियों को अपनी इच्छापूर्ति के लिए शतरंज की गोटियां मात्र मानते हैं ।

एक प्रसिद्ध व्यक्ति ने कहा है,

"The heart has reason that Reason does not know."

आसमान के सितारों के साथ प्यार करने वाले "व्यवहारशून्य" लोगों के लिए ही यह स्मृति ग्रंथ संकलित किया गया है, चतुर पुरुषों के लिए नहीं। तान् प्रति नैष यत्नः।

चीनी भाषा में एक कहावत है—

"If you want to plan for a year, plant corn.
If you want to plan for 30 years, plant a tree.
But if you want to plan for 100 years, plant men."

आज का कोई भी 'बुद्धिमान' व्यक्ति तीसरे प्रकार की योजना बनाने की गलती नहीं करता।

वह मेथी की सब्जी लगाता है, आम या अखरोट का पेड़ नहीं।
ऐसे बुद्धिमान व्यक्तियों में बड़े भाई की गिनती नहीं होती थी।
इसी कारण वे हमें प्रिय, आदरणीय, वंदनीय प्रतीत होते हैं।

× × ×

बड़े भाई का स्वभाव अनुशासनप्रिय, व्यवस्था-प्रधान था। हर कार्य वे नियत समय पर ही करते थे। देरी से स्टेशन पर आने के कारण ट्रेन निकल गई, ऐसा प्रसंग उनके जीवन में कभी नहीं आया। ट्रेन के नियत समय के बहुत पूर्व स्टेशन पर आकर वे प्रतीक्षा कर रहे हैं, यह दृश्य भी कभी किसी ने देखा नहीं।

ट्रेन पकड़ने के विषय में बड़े भाई ने जल्दबाजी जीवन में एक ही बार की—मृत्यु की ट्रेन पकड़ने के विषय में।

× × ×

अपने जीवन की सफलता के सर्वोच्च बिन्दु पर जॉन ब्रेडमन ने क्रिकेट के क्षेत्र से निवृत्ति की घोषणा की तो एक पत्रकार ने प्रश्न किया, "वर्तमान यश की स्थिति में आपने निवृत्ति का निर्णय क्यों किया ?"

ब्रेडमन ने उत्तर दिया, "So, that you should ask me, Why ? and not "Why not ?" (इसलिए कि आप मुझसे 'क्यों' के स्थान क्यों नहीं ? प्रश्न न पूछे।)

हमारे देश में समान परिस्थिति में इसी प्रश्न का यही उत्तर अजीत वाडेकर ने दिया था। क्या दुनिया से निवृत्त होते समय बड़े भाई का मन भी इस उत्तर से प्रभावित था ? पता नहीं।

किन्तु उनकी महानिवृत्ति के पश्चात सभी के मन में वही प्रश्न उभर आया, जो इन दोनों पत्रकारों ने उपस्थित किया था।

× × ×

यह प्रस्तावना लिखते समय एक बात अखर रही है। बड़े भाई के कई गुणों का उल्लेख इसमें आता है। किन्तु उनसे संबंधित घटनाओं का उल्लेख जानबूझकर टाला है। क्योंकि ये घटनाएं ताजी हैं और जीवित व्यक्तियों से संबंधित हैं। अतएव नाम निर्देश करते हुए लिखना इस समय संगठनशास्त्र के अनुकूल नहीं है। ग्रेटब्रिटेन तथा अन्य कुछ देशों में ऐसी प्रथा है कि कुछ महत्वपूर्ण दस्तावेज तुरन्त प्रकाशित न करते हुए तीस साल के बाद प्रकाशित करना। इस प्रथा के पीछे भी शायद इसी तरह की मानसिकता होगी।

किसी भी बड़े समुदाय को चलाने वाले व्यक्ति में दो तरह के गुणों की आवश्यकता हुआ करती है—वह कुशल संगठक (Organiser) भी हो और समर्थ प्रशासक (Administrator) भी। संगठन (Organisation) और प्रशासन (Administration) दोनों वर्तुल (Overlapping) हैं, किन्तु पूरी तरह से एकरूप (Indentical) नहीं। प्रशासन (Administration) का संबंध प्रमुख रूप से बाह्य, वस्तुनिष्ठ व्यवस्था से, मशिनरी से रहता है, और संगठन (Organisation) का प्रमुख विषय सम्बन्धित लोगों की आत्मनिष्ठ प्रेरणा तथा उनका परस्पर सामंजस्य हुआ करता है। यह आवश्यक नहीं कि जो एक विषय में कुशल है, वह दूसरे विषय में भी कुशल ही होगा। किन्तु भारतीय मजदूर संघ का यह सद्भाग्य है कि उसके महामंत्री में दोनों गुणों का सुखद संयोग था।

परमपूजनीय श्रीगुरूजी के व्यक्तित्व का बहुत गहरा असर बड़े भाई के मन पर था। "किं कर्म किमकर्मेति"—क्या करें, क्या न करें, यह मानसिक द्वंद्व हर मनुष्य के जीवन में कभी-कभी उपस्थित होता है। ऐसे अवसर पर वे एकाग्रचित्त से यह कल्पना करने का प्रयास करते थे कि उस परिस्थिति में श्रीगुरूजी होते तो वे क्या निर्णय करते। उनकी कल्पना किस सीमा तक सही या गलत निकलती थी, यह तो वे ही बता सकते थे, किन्तु महत्व की बात यह थी कि द्वंद्व की स्थिति में वे श्रीगुरूजी को सन्दर्भ बिन्दु (Point of reference) मानते थे।

स्वयंसेवक के नाते बड़े भाई के लिए सर्वश्रेष्ठ व्यक्तित्व पूजनीय सरसंघचालक जी का था। उनकी अन्तिम बीमारी के समय उनका स्वास्थ्य देखने के लिए परमपूजनीय बालासाहब पुणे के मुले हास्पिटल में गए तो उसके कारण उनका मन अतीव उल्लसित हुआ। "पुंडल भेटी परब्रह्म आलेगा"। उस समय उनकी ऐसी मनः स्थिति थी मानो "पुंडलीक से मिलने लिए परब्रह्म आ गया हो"।

जबसे मेरा बड़े भाई से संबंध आया तबसे मैंने यह अनवरत देखा कि उनका व्यक्तिगत, निजी जीवन, तितिक्षा से परिपूर्ण था। तितिक्षा का अर्थ है, "सहनं सर्वदुःखानाम् अप्रतिकारपूर्वकम्"। वह सब प्रकार के शारीरिक, मानसिक दुःख सहज भाव से सहन कर लेते थे। और मुझे कष्ट तब अधिक होता था जब मैं यह देखता था कि कुछ निकटवर्ती लोग उनकी मनःस्थिति को समझ नहीं पाते थे। किन्तु ऐसी अवस्था में कुछ कर पाना भी संभव नहीं होता था। मानना पड़ता है कि कुछ लोगों का ग्रहयोग ही इस तरह का होता है। किन्तु तितिक्षा की भट्टी में तपने के कारण उनके व्यक्तित्व का सोना और अधिक निखर उठता था—'तप्तं तप्तं पुनरपिपुनः कान्तवर्णं सुवर्णम्"।

निर्णय करने का कार्य वे आत्मविश्वासपूर्वक करते थे, तो भी उस विषय में उनका मन बंद नहीं हो जाता था, खुला रहता था। कोई भी निर्णय उपलब्ध तथ्यों के आधार पर ही किया जा सकता है। निर्णय करने के पश्चात् कोई छोटा कार्यकर्ता उनके पास आया और उनके सन्मुख कुछ और भी तथ्य रखे, जिनके परिप्रेक्ष्य में उनका पूर्व निर्णय गलत प्रतीत हो सकता है, तो उन नये तथ्यों की जांच कराने में और वे सत्य सिद्ध हुए तो उनके प्रकाश में अपना पूर्व निर्णय बदलने में उनको संकोच नहीं लगता था। "मेरा पूर्वप्रचारित निर्णय मैं कैसे बदलूं," यह अहंकार उनके मन में नहीं आता था। "संगठन में अंतर्गत न्याय मिलेगा" यह विश्वास छोटे से छोटे कार्यकर्ता के भी मन में हमेशा रहना चाहिए। इस हेतु अपने अहंकार का विचार बीच में न लाते हुए वे निर्णय में उचित परिवर्तन कर लेते थे। यही बात लेख या ड्राफ्ट के बारे में भी थी। उनके ड्राफ्ट या लेख मे कोई भी उचित परिवर्तन किसी ने सुझाया तो उसको स्वीकार करने में वे कभी हिचकिचाहट नहीं करते थे, फिर वह सुझाव देनेवाला व्यक्ति अनुभव, आयु और अध्ययन में कितना भी छोटा क्यों न हो।

पारिवारिक वायुमंडल का निर्माण उनके सन्निध्या का एक स्वाभाविक और अपरिहार्य, परिणाम था। संघ, मजदूर संघ, विधान परिषद, यहां तक कि अंतिम बीमारी में विविध अस्पताल आदि, जहां-जहां वे गए, वहां-वहां इसी तरह का वातावरण अपने आप निर्माण होता गया। अनेकानेक परिवार उनको अपने-अपने परिवार का मुखिया मानते थे। माना जाता है कि ट्रेड यूनियन का क्षेत्र स्पर्धा-ईर्ष्या से हमेशा ओतप्रोत रहता है। किन्तु बड़े भाई इस नियम के लिए अपवाद थे। विभिन्न यूनियनों और उनके नेताओं-कार्यकर्ताओं से उनके घनिष्ठ संबंध थे। भारतीय रेलवे मजदूर संघ के लखनऊ अधिवेशन के लिए मान्यवर जगदीशचंद्र जी दीक्षित का आना, राष्ट्रीय श्रम (विश्वकर्मा) दिवस के कानपुर के समारोह की अध्यक्षता करने के लिए प्रतिवर्ष नियमित रूप से माननीय मकबूल अहमद साहब का उपस्थित रहना, या भारतीय मजदूर संघ के किसी भी कार्यक्रम को सम्पन्न करने के लिए माननीय गणेशदत्त जी वाजपेयी का सहर्ष सामने आना, ये सब घटनाएं ट्रेड यूनियन के क्षेत्र में आश्चर्यजनक प्रतीत होने वाली थीं। आगे चलकर राष्ट्रीय स्तर पर एन० सी० सी० के नेताओं को भी यही अनुभव आया। बड़े भाई के सहवास की स्वाभाविक परिणति थी अपनेपन का भाव। इससे कोई भी व्यक्ति अछूता नहीं रह सकता था। बनारस के रेलवे कर्मचारी के केस के लिए तत्कालीन रेल मंत्री श्रीमान् कमलापति जी त्रिपाठी के निवास पर दरबान, चपरासी, सेक्रेटरी

आदि सबको पीछे धकेलकर सीधे पंडित जी के प्राइवेट कमरे में घुसनेवाले, विंध्याचल निवासी गणेश जी हों, या अस्पताल के कमरे का वायु मण्डल प्रसन्नता का रहे, इस हेतु से अपनी विशेष शैली में दाहिना हाथ ऊपर उठाकर, ",हां, बड़े भाई ! बी० एम० एस० जिन्दाबाद", यह नारा देनेवाली पूना के मुले हास्पिटल की सिस्टर खुर्शीद हो, सभी के मन में उनके सहवास के कारण एक ही भाव समान रूप से निर्माण होता था—आत्मीयता का।

बड़े भाई का परिवार एक आदर्श हिंदू संयुक्त परिवार है। भारतीय मजदूर संघ की कार्यसमिति की बैठक वाराणसी में हुई थी। बैठक समाप्त होने के पश्चात् कार्यसमिति के सभी लोग बड़े भाई के गांव "बगही" गए। हमारे साथ कुछ महिलाएं भी थीं। वहां जाने के बाद उस विशाल परिवार के छोटे-बड़े, पुरुष-महिला, सभी लोग जिस तत्परता से हम लोगों की सेवा मे जुट गए, यह देखकर हम सभी चकित हुए। वह आदर्श पारिवारिक भाव का एक अनोखा दृश्य था। परिवार के सभी सदस्यों की मनोरचना इस तरह की रहे, यह सुसंवादित्व आश्चर्यजनक था। उनके बड़े भाई श्री रमाशंकर सिंह जी हमेशा कांग्रेस के कार्यकर्ता रहे हैं। किन्तु उसके कारण पारिवारिक प्रेम में किंचित भी न्यूनता नहीं आई। हां, वे हंसते-हंसते यह अवश्य कहा करते थे कि "मैं तुम संघवालों की एक बात समझ नहीं सका हूं, मैं बड़ा भाई हूं, रामनरेश मेरा छोटा भाई है, लेकिन आप संघवाले छोटे भाई को "बड़े भाई" के नाम से पुकारते हो।" यह सब वह प्रेम से हंसी-मजाक में कहते थे। पूरे परिवार में व्याप्त इसी प्रसन्न प्रेम के वायुमंडल का अनुभव हमने किया।

उनकी पत्नी के बारे में क्या कहा जाये ? वह कुछ दिनों के लिए लखनऊ रही थीं। उस समय लखनऊ के मजदूर संघ के कार्यकर्ता कहा करते थे कि भाभी जी को देखकर हमें लक्ष्मण की उर्मिला की याद आती है। बड़े भाई की अन्तिम बीमारी में जब भाभी जी थोड़े दिनों के लिए बम्बई आकर रहीं तो वहां के कार्यकर्ताओं ने उनके जीवन की तुलना सीता जी के कठोर जीवन से की। उनका पूरा जीवन एक उग्र तपश्चर्या था। किन्तु यह सब सहन करते हुए भी हृदय में कहीं रोष, दुःख या कटुता नहीं। सम्पर्क में आने वाले सभी व्यक्तियों के साथ व्यवहार मीठा, स्नेह का। हमेशा हंसता मुख। यह बहुत कठिन परीक्षा है।

भारतीय मजदूर संघ के कार्य में वे आत्मिक समाधान तथा आत्मविकास का अनुभव करते थे। शोषित-पीड़ित-दलित जनों के साथ आंतरिक सह-अनुभूति, हर तरह के अन्याय के विषय में चिढ़ तथा उसके खिलाफ लड़ने की नित्यसिद्धता, गरीबों के सुख-दुःख में सहभागी होने की स्वाभाविक प्रवृत्ति आदि बातें उनके सहज स्वभाव का अंग थीं। इस दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि "गुणकर्मविभागशः" वे भारतीय मजदूर संघ के कार्यकर्ता थे। वह भारतीय मजदूर संघ को केवल ट्रेड यूनियन नहीं मानते थे। उनकी यह धारणा थी कि यद्यपि कानून की दृष्टि से भारतीय मजदूर संघ केवल ट्रेड यूनियन ही है, किन्तु प्रेरणा की दृष्टि से वह ईश्वरीय कार्य का एक प्रभावी साधन है। संगठनात्मक तथा संवैधानिक दृष्टि से भारतीय मजदूर संघ एक स्वायत्त संगठन है। कोई भी संस्था राष्ट्रीय स्वयंसेवक की विंग नहीं है। सत्य यह है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की विंग केवल उसके स्वयंसेवक हैं। किन्तु राष्ट्रीय

स्वयंसेवक संघ से संस्कार तथा प्रेरणा प्राप्त कर मजदूर क्षेत्र में काम करने वाले बड़े भाई की श्रद्धा थी कि प्रेरणा तथा दिव्य पावित्र्य की दृष्टि से भारतीय मजदूर संघ का कार्य "त्वदीयाय कार्याय" का एक अविभाज्य अंग है। यह कार्य करते रहना ही भगवान की श्रेष्ठ पूजा है। "स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य"।

अन्य क्षेत्रों में प्रतियोजित (On deputation) काम करने वाले कार्यकर्ता की मनोवृत्ति कैसी होनी चाहिए, इस विषय मे एक आदर्श उदाहरण बाजीराव का है। उन्होंने जब कार्यभार संभाला, हिंदवी स्वराज्य के पास साधन, स्रोत तथा मनुष्यबल बहुत सीमित था। जबकि रणनीति की मांग थी कि दिल्ली की दिशा में दिग्विजय के लिए आगे बढ़ा जाय। उस समय बाजीराव ने छत्रपति शाहू महाराज से प्रार्थना की थी कि वह उत्तरदिग्विजय के लिए उनको केवल आदेश दें; इस कार्य के लिए आवश्यक धन, साधन, सेना आदि सब कुछ जुटाने का काम बाजीराव स्वयं करेंगे; इसके लिए वे छत्रपति को परेशान नहीं करेंगे; छत्रपति केवल आदेश दें। वैसा आदेश दिया गया और तदनुसार सब आवश्यक साधन एकत्रित करके बाजीराव ने चंबल तक का प्रदेश हिंदवी स्वराज्य में शामिल कर लिया। लोगों की धारणा थी कि यह कार्य अद्भुत था। किंतु इसके कारण उनके मन में अहंकार और व्यक्तिवाद निर्माण नहीं हुआ। एक अवसर पर दक्षिण के कुछ लोगों ने उनको आदरपूर्वक "स्वामी" कहकर सम्बोधित किया तो इस पर वे बोल उठे, "स्वामी ! हम कहां के स्वामी ! हमारे स्वामी तो सातारा में बैठे हैं।" (सातारा में शाहू छत्रपति का निवास था)। असामान्य कर्तृत्व होते हुए भी सम्पूर्ण आत्मसमर्पण। अहम् का नाम नहीं। "बुद्धिमतां वरिष्ठ" और "वानरयूथपति" होते हुए भी "श्रीरामदूत"। सेव्य-सेवक भाव का यह आदर्श बड़े भाई के जीवन में भी प्रकट हुआ। मातृसंगठन पर बोझ नहीं डाला। अपने कर्तृत्व से मजदूर संघ का काम बढ़ाया, किंतु मातृसंगठन के प्रति शतप्रतिशत आत्मसमर्पणभाव सदैव मन में जागृत रखा।

परमपूजनीय श्रीगुरूजी के बताये हुए त्रिविध पथ्यों का पालन उन्होंने निष्ठापूर्वक किया। अपने क्षेत्र में कार्य की रचना संघ के आदर्शों के प्रकाश में किया। संघ की रीति-नीति-पद्धति मजदूर क्षेत्र में चलाया। संघ-शाखा के साथ नित्य-संबंध निरपवाद रूप से निभाया। अंतिम बीमारी में अस्पताल में भी उनके झोले में निकर अवश्य रहती थी।

बड़े भाई के धैर्य की परीक्षा लेने वाले कई प्रसंग उनके जीवन में उपस्थित हुए। उलझनें संगठन के अन्दर या बाहर पैदा होने वाली दोनों तरह की हो सकती हैं। एक तो इस तरह की कि जिसमें अविलम्ब आपरेशन करना ही उचित होता है। सिकन्दर ने "गार्जियन नॉट" को तलवार से तोड़ा था। कुछ मामले इस कहावत का स्मरण दिलाते हैं कि जल्दबाजी का काम शैतान का, या सब्र का फल मीठा होता है। ऐसे मामलों में आपरेशन तो करना पड़ता है, किंतु खटाक से नहीं। कुएं से पानी निकालने के लिए उपयोग में आनेवाली रस्सी हमेशा कुएं के पत्थर से घिसती रहती है। इस प्रक्रिया में वह धीरे-धीरे टूटती रहती है और पत्थर पर भी धीरे-धीरे घिसाई का निशान अंकित होता रहता है। यह प्रक्रिया अखण्ड चलती रहती है। किंतु इस प्रक्रिया से रस्सी टूटने में बहुत देर लगती है। छेनी और हथौड़ी से लोहे की पट्टी को तोड़ना आसान है किंतु रेंगमाल (Sand Paper) से अनवरत घिसते रहना और उस प्रक्रिया के

परिणामस्वरूप पट्टी को तोड़ना कठिन काम है। इस प्रक्रिया में पट्टी तोड़ने वाले के धीरज की परीक्षा होती है। मनोविज्ञान की गहरी जानकारी न रखने वाले कार्यकर्ता, बुद्धिमान होते हुए भी, यह ठीक तरह से तय नहीं कर पाते कि मामला किस श्रेणी का है—"गार्जियन नॉट (खटाक से काट देने) की श्रेणी का, या "सैंडपेपर ट्रीटमेंट" की श्रेणी का। और एक बार यह भी तय हुआ कि मामला दूसरी श्रेणी का है तो भी उसको ठीक ढंग से निभाना कई कार्यकर्ताओं के लिए असंभव हो जाता है, क्योंकि इसमें लगातार लम्बी अवधि तक मानसिक तनाव सहन करना पड़ता है। इसके लिए मजबूत नसों की (Strong Nerves) आवश्यकता होती है। जिनकी नसें इतनी मजबूत नहीं, उनका दम जल्दी उखड़ता है। वे अधीर हो जाते हैं। उनको लगता है कि मामले को जैसे-तैसे शीघ्र निपटाया जाय। अपने अधैर्य के कारण वे उचित क्षण तक प्रतीक्षा करने में असमर्थ हो जाते हैं, और फिर उनके द्वारा उठाया गया कदम कार्य की हानि करने वाला सिद्ध होता है। ऐसे मामलों में बड़े भाई का धीरज असाधारण था। बड़े भाई के व्यवहार के संदर्भ में यूरोप के एक बड़े नेता के बारे में लिखा गया इस वाक्य का स्मरण होता है कि, "His patience was infinite; he could wait and watch until others got impatient, acted and failed."

आपत्काल में बड़े भाई को भारतीय मजदूर संघ के महामंत्रीपद का दायित्व सौंपा गया। उन दिनों उसका निर्वाह करना बहुत ही कठिन था। तत्पश्चात् आई परिस्थितियां भारतीय मजदूर संघ के लिए और भी उलझन पैदा करने वाली थीं। अपने अपयश तथा अक्षमता के लिए किसी न किसी को बलि का बकरा (scapegoat) बनाने की चतुराई राजनैतिक लोगों में हुआ करती है। बकरे की भूमिका ट्रेड यूनियन को देना उनके लिए आसान हो जाता है। यद्यपि जनमानस में राजनेता की प्रसिद्धि-प्रतिष्ठा ऊंची हुआ करती है, परन्तु ऐसे नेताओं का भंडाफोड़ करना कठिन कार्य नहीं होता। किंतु ऐसे रहस्यस्फोट के परिणामस्वरूप राजनैतिक अस्थिरता बढ़ सकती है, जिसका परिणाम अपने पूरे परिवार के लिए दूरदृष्टि से अच्छा नहीं रहेगा, ऐसा ध्यान में आया तो फिर सारा मिथ्या दोषारोपण सहन करते हुए संयम बरतना श्रेष्ठ नेतृत्व का गुण है। इस प्रकार के संयम के कारण स्वयं अपनी बदनामी को दूर करना असंभव हो जाता है। और विशेष बात यह कि जिनके दूरगामी हितों की रक्षा करने के लिए यह संयम रखा जाता है उनको भी अज्ञान के कारण या दायित्वहीनता के कारण इस प्रकार के संयम की महत्ता ख्याल में नहीं आती। यह सब होते हुए भी अपने वृहत् परिवार के सर्वकंष हित को प्राथमिकता देते हुए, मन की सात्विक उत्तेजना को नियंत्रित करके हंसते-हंसते अपकीर्ति को हजम कर जाना असामान्य गुण है। खासकर उस कालखण्ड में जबकि योग्यताविहीन नेता अपने व्यक्तिवाद को बढ़ावा देने के लिए आज के प्रचारतंत्र के सुपरिचित, सुलभ किन्तु प्रतिष्ठाशून्य मार्गों से अपनी प्रतिमा उज्ज्वल दिखाने का प्रयास कर रहे हों। यह असामान्यता बड़े भाई में थी। उनके निकटस्थ सहयोगी ही यह बात जान सकते थे।

महामन्त्री बनने के पश्चात संगठन में जो कुछ भी होता था उसक पूरी जिम्मेवारी वे स्वयं पर लेते थे। अच्छी घटनाओं का श्रेय लेना तो सरल है, सवाल तब खड़ा होता है जब संगठन में या संगठन द्वारा कोई दुःश्रेय या बदनामी देने वाला कार्य हो चुका हो। ऐसे समय

प्रतिमा-निर्माण के पीछे पड़े हुए हल्के और सतही नेताओं की चतुराई इसी में मानी जाती है कि उस दुर्घटना के लिए वास्तव में जो कार्यकर्ता जिम्मेवार है उस पर सीधे दोषारोपण करते हुए स्वयं की भूमिका निष्कलंक तथा श्रेष्ठ दिखाना । यह चतुराई बड़े भाई के स्वभाव में नहीं थी । गलत काम करने वाले कार्यकर्ताओं को वे एकांत में अवश्य डांटते थे । किन्तु बाहर के लोगों के साथ बात करते समय ऐसा बताते थे कि "गलती की पूरी जिम्मेवारी मेरी है" । इस तरह वह अपने कार्यकर्ताओं को पूरा संरक्षण देते थे । अपनी जिम्मेवारी दूसरे पर डाल देना (Passing the buck) चतुराई का काम हो सकता है, किन्तु यह अच्छे नेतृत्व के लिए शोभा देने वाला गुण नहीं है । बड़े भाई के स्वभाव के कारण उनका मनश्चित्र इस तरह उभरकर आता है कि वे महामंत्रीपद के कुर्सी में बैठे हैं, सामने बड़ा टेबल है, टेबल पर सामने एक छोटी प्लेट रखी है, जिस पर लिखा है—"The buck stops here."

पश्चिम में सालोमन राजा की विशेष प्रतिष्ठा है। अपने पिता की मृत्यु के समय किशोर सालोमन के कंधे पर एकदम बहुत बड़ा बोझ आया । आयु छोटी, राजकाज बड़ा और उलझनवाला । मन में बार-बार यह प्रश्न उठता कि "कैसे संभाल सकूंगा इसे" । उस समय वे अपने एकांत कमरे में गए और घुटने टेककर भगवान की प्रार्थना करने लगे । क्या मांगा सालोमन ने भगवान से ? राज्य विस्तार ? यशकीर्ति ? नहीं । उन्होंने याचना की— "Lord ! Give me an understanding heart." (हे भगवान ! मुझे सूक्ष्म दृष्टियुक्त पैनी समझवाला हृदय प्रदान कर ।) प्रतीत होता था कि बड़े भाई ने भी यही प्रार्थना की थी और भगवान ने "तथास्तु" कहा था । वे सबके मन को सही ढंग से समझ लेते थे । बड़े भाई को इस बात से कितनी तकलीफ होगी यह न जानने के कारण अतिश्रद्धा से उनके पूरे चेहरे पर तैल-युक्त कुंकुम लगाने वाली असम के चायबागान की मजदूर महिलाएं, भारतीय मजदूर संघ को दबाने की इच्छा से सम्बन्धित मंत्री महोदय को गुमराह करने वाले अफसरशाह, केन्द्रीय अभियान समिति (एन०सी०सी०) में हिस्सा लेने वाले विभिन्न केन्द्रीय श्रम संस्थाओं के सभी नेताओं को बुद्धू और खुद को होशियार समझने वाले छोटी संस्था के बडे नेता, उत्तर प्रदेश की संविद सरकार में उनको श्रम मंत्री बनाने के लिए बनी सर्वसम्मत योजना में बाधा डालने वाले द० बा० ठेंगड़ी, स्थानीय स्तर पर होने वाले पक्षपात या अन्याय के कारण आर्त्त हृदय से दर्शन के लिए आने वाले भारतीय मजदूर संघ के छोटे कार्यकर्ता—सभी का हृदय वे बिल्कुल ठीक ढंग से समझते थे । "ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्"—इस कोटि का उचित व्यवहार वह सबके साथ करते थे । तात्कालिक लाभ के लिए, फिर वह कितना भी बड़ा क्यों न हो, चालाकी या हथकंडे करने की या निम्न स्तर पर उतर आने की कल्पना भी उनके मन को छूती नहीं थी । अपने ध्येय की अन्तिम और अपरिहार्य विजय पर उनकी दृढ़ श्रद्धा थी । उनकी यह धारणा थी कि अपवित्र साधनों से सिद्ध हुआ पवित्र कार्य भी साधनों की अपवित्रता के कारण अंततोगत्वा अपवित्र ही हो जाता है । साधन-शुचिता पर उनका विश्वास था । "नहि कल्याणकृत कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति", इस सुभाषित पर उनका पूरा भरोसा था । उनकी यह मान्यता थी कि सच्चारित्र्य अपने आप में एक सम्पूर्ण पारितोषिक है । संकट कितना भी बड़ा क्यों न हो, उसके कारण घबड़ाकर बायें-दायें देखना उनके स्वभाव में ही नहीं था । यश कभी उनके मस्तिष्क में नहीं गया । न आपत्ति ने उनके हृदय पर कभी असर किया। विलम्ब के

कारण वे कभी अधीर नहीं हुए। इस तरह व्यक्तित्व का धनी व्यक्ति ही अनुकूल, प्रतिकूल, विरोधी, सुखमय, भीषण दुखदायी—सभी परिस्थितियों में अविचल रहते हुए अपना तीव्र समझदारी वाला विलक्षण हृदय (Understanding Heart) रख सकता है। अवसरवादी मानसिकता वाले (Weathercock mentality) उन लोगों के बस की यह बात नहीं, जो परिस्थिति के हर परिवर्तन के समय गिरगिट के समान अपना रंग बदलने में ही व्यवहारचातुर्य का अनुभव करते हैं। ऐसे चतुर लोग बड़े भाई को पागल समझते थे तो बड़े भाई के लिए इससे अधिक अच्छा चरित्र प्रमाण-पत्र (Good Character Certificate) और क्या हो सकता था। वे तो—तुल्यनिंदास्तुतिर्मौनी—इधर-उधर की परवाह न करते हुए अपने ध्येय-पथ पर अग्रसर होते रहते थे। अपने प्रत्यक्ष व्यवहार से कार्यकर्ताओं के सन्मुख आदर्श उपस्थित करते रहते थे।

संघ के अखाड़े से निकले हुए वे एक कुशल रणनीतिज्ञ (Strategist) थे। किन्तु उनकी रणनीति (Strategy) का आधार था विवेक, (discretion), न कि आजकल का चातुर्य (diplomacy)। महत्वकार्य करने वाले श्रेष्ठ राजनीतिज्ञों के भी चातुर्य (diplomacy) का आधार विवेक (discretion) ही रहा है। उन्होंने भी चालाकी, हथकंडे, तिकड़मबाजी आदि का सहारा नहीं लिया। किन्तु आजकल हमारे देश में तिकड़म को व्यवहारचातुर्य माना जाता है। बड़े भाई ने कभी तिकड़म नहीं किया। फिर भी बाहर वालों के व्यवहार तथा संगठन के अन्तर्गत निर्माण होने वाली उलझनों को संभालने में वह हमेशा सफल रहे। विशुद्ध ध्येय-निष्ठा, सम्पूर्ण आत्मनियंत्रण, अन्तिम विजय पर अविचल विश्वास और मानवीय मनोविज्ञान के गहरे ज्ञान के परिणामस्वरूप उन्हें सफलता प्राप्त होती थी। जब सामान्य स्वयंसेवक के नाते वे काम कर रहे थे, उस समय भी किसी बड़े राजनैतिक नेता की बनाई हुई प्रतिमा के कारण वे चकाचौंध नहीं हुए और मजदूर संघ के सर्वोच्च कार्यकारी पद पर आसीन रहते हुए भी छोटे से छोटे कार्यकर्ता का अन्तर्भूत बड़प्पन समझने में उन्हें कभी देर नहीं लगी। विभिन्न केन्द्रीय श्रम संस्थाओं के ख्याति प्राप्त नेताओं के साथ, या सरकारी मंत्री तथा अधिकारियों के साथ व्यवहार करते समय उनके स्वभाव की सहजता नित्यवत् कायम रहती थी। वैसे छोटे मजदूरों के साथ बात करते समय उनकी ईश्वरप्रदत्त मानवीय प्रतिष्ठा को वे कभी भूलते नहीं थे।

भारतीय मजदूर संघ में नेतृत्व की द्वितीय पंक्ति खड़ी करने की दृष्टि से बड़े भाई ने सजग प्रयास (Conscious efforts) चलाए थे। कुशल संगठक होने के कारण सभी यूनियनों के सभी कार्यकर्ताओं के साथ उनका सीधा संपर्क था। हरेक के गुणावगुण की उन्हें जानकारी थी। कार्यकर्ताओं के पारस्परिक अच्छे-बुरे संबंधों का उनको पता था। उनमें से बीजीभूत क्षमता रखने वाले कार्यकर्ताओं का चयन करना, उनके गुणों को बढ़ाने तथा दोषों को दूर करने का प्रयास करना, इस दृष्टि से कार्यकर्ता का अहंकार न बढ़े यह दक्षता लेते हुए उसको प्रोत्साहन देना तथा वह निरुत्साहित होकर निष्क्रिय न हो जाय, इस सर्तकता के साथ उसको डांट-फटकार करना, पहल (initiative) करने की कार्यकर्ता की क्षमता संगठन के अनुशासन की चौखेट के अंतर्गत रखते हुए बढ़ाना, उसकी पहल करने की क्षमता में कमी न आने देते हुए उसे अनुशासनबद्ध बनाना, ध्येयवाद के विषय में अलग से चर्चा न करते हुए अपनी

व्यक्तिगत जीवन-शैली से कार्यकर्ताओं के सम्मुख ध्येयवादी जीवन का आदर्श उपस्थित करना, ये सारी बातें उनके स्वभाव का अंग बन गई थीं और इसके फलस्वरूप जगह-जगह कार्यकर्ताओं का आत्मविकास होता जाता था। नेतृत्व की द्वितीय पंक्ति इसी प्रक्रिया में से उभरकर ऊपर आई। हिन्दुस्थान के सार्वजनिक जीवन की आज की अवस्था में यह बात असाधारण ही मानी जानी चाहिए, क्योंकि प्रवाह इसके ठीक विपरीत दिशा में चल रहा है। जिन्होंने कुछ महान कार्य खड़ा करना है उनकी प्रवृत्ति और जिन्होंने केवल अपना व्यक्तिगत नेतृत्व, नाम और प्रतिमा निर्माण करनी है उनकी प्रवृत्ति, दोनों में स्वाभाविक महान अंतर रहता ही है। श्री रिचर्ड वुल्फ (Richard Wolff) अपनी पुस्तक "Man at the top" में लिखते हैं :

"In the case of a leader, perhaps the hardest thing is to help those who stand immediately next—those who hold the trying position of second in command, or who are near enough to the front to be constantly impressed by the fact that they fall short of being at the front. The temptation to treat them as possible rivals and to depreciate their gifts instead of magnifying them is constant to everyone but a truly great man."

ऐसे अपवादभूत वस्तुतः महान व्यक्ति (Truly great man) का दर्शन बड़े भाई में होता था। भारतीय मजदूर संघ की मजबूती और विकास का यह भी एक बड़ा कारण रहा है।

यह बात सही है कि पारिवारिक, आर्थिक आदि कारणों से बड़े भाई बहुत अधिक औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि उनके अंदर विद्योचित प्रज्ञा (Academic Intelligence) नहीं थी। कई लोग यह बात समझ नहीं पाते कि औपचारिक शैक्षणिक योग्यता (Academic Qualifications) और स्वभावज विद्योचित प्रज्ञा (Academic Intelligenec) में अंतर है। गुरूदेव टैगोर या श्री हरिनारायण आप्टे की शैक्षणिक योग्यता (Academic Qualifications) कितनी थी? आप्टे जी कालेज में प्रवेश नहीं कर पाये थे किंतु उनकी किताबें एम० ए० की परीक्षा के लिए विहित (Prescribe) की गई थी। वह एम० ए० के विद्यार्थियों के परीक्षक भी रहे। कमाल की बात तो आईन्स्टीन की है। यह सर्वज्ञात था कि विद्यालयीन जीवन में आईन्स्टीन को उनके प्राध्यापक मंदबुद्धि का मानते थे। शैक्षणिक योग्यता) Academic Qualifications) अलग बात है, और विद्योचित प्रज्ञा (Academic Intelligence) अलग। बड़े भाई में विद्योचित प्रज्ञा (Academic Intelligence) स्वभावतः, प्रकृत्या ही बहुत थी। परिस्थितिवश वे शैक्षणिक योग्यता (Academic Qualifications) प्राप्त नहीं कर सके। अर्थात् इसके कारण सार्वजनिक कार्य की दृष्टि से त्रुटि तो अवश्य आती थी, किंतु यह अनुभव करके सबको आश्चर्य होता था कि अपने अथक परिश्रम के आधार पर उन्होंने इस त्रुटि की क्षतिपूर्ति कर लिया था। भारतीय मजदूर संघ का महामंत्रीपद सम्भालने के पश्चात तो उन्होंने इस दृष्टि से और ही कठोर परिश्रम किए।

अथक परिश्रम
कठोर परिश्रम
प्रदीर्घ कठोर परिश्रम
का ही दूसरा नाम था माननीय बड़े भाई।

कठोर परिश्रम के कारण ही उनका बज्र शरीर असमय ही टूट गया। मजदूर संघ में प्रवेश करने के पूर्व राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्य में भी उन्हें इसी तरह के असहनीय कष्ट उठाने पड़े थे, जिनके कारण उन्हें प्ल्युरिसी (Pleurisy) हुई थी। उसमें से दुरुस्त होते ही बड़े भाई ने फिर से पूर्ववत् जीवन आरम्भ किया, मानो बीच में प्ल्युरिसी वगैरह कुछ हुआ ही न हो। मजदूर संघ में तो श्रम की मात्रा बढ़ती ही गई। इस कारण उन्हें दौरों के समय भी कई बार ज्वर रहने लगा। किन्तु वे किसी को यह बात बताते नहीं थे और निश्चित कार्यक्रम यथावत् पूरा करते रहते थे। पूना का मुले अस्पताल या बम्बई का बाम्बे अस्पताल यह पहला अस्पताल नहीं था, जिसमें उनको लम्बी अवधि तक रहना पड़ा हो। आपत्काल के पूर्व इससे भी लम्बी अवधि तक लखनऊ के अस्पताल में उन्हें रहना पड़ा था। किन्तु अपने स्वास्थ्य के विषय में वे किसी से कभी चर्चा नहीं करते थे। ज्यूलियस सीजर के बारे में प्लूटार्क ने कहा है कि वह जन्म से ही मिरगी (epilepsy) का मरीज था और वैसे भी उसकी तबीयत नाजुक थी। किन्तु उसका जीवनक्रम बहुत ही कर्मठता का था। अपना दिनक्रम कम कष्टकर हो, इस दृष्टि से अपनी गम्भीर बीमारी के बहाने का उपयोग ज्यूलियस ने कभी नहीं किया। सभी वेदनाएं-व्यथाएं सहन करते हुए दिग्विजयी जीवन के लिए उसने स्वयं को योग्य दिखाया था। बड़े भाई के विषय में भी यही कहना पड़ेगा। कई श्रेष्ठ पुरुषों न यही प्रक्रिया स्वीकार किया बनिस्बत इसके कि—

काकोऽपि जीवति चिराय—बालिं च भुक्ते।

व्यक्तिगत जीवन और संघजीवन में विविध प्रकार का शिष्यत्व (apprenticeship) उन्होंने किया था। इस कारण मनुष्य के मनोविज्ञान के विषय में उनमें एक प्रकार की अन्तर्दृष्टि विकसित हुई थी। अतएव उनको गुमराह करना किसी भी व्यवहारचतुर आदमी के लिए संभवनीय नहीं था। दूसरे के अन्तर्हेतु को जानने की वे हमेशा कोशिश करते थे। किसी के हाथ से कुछ गलती हुई या अपराध हुआ, तो उसके पीछे मनोवैज्ञानिक कारण क्या हो सकता है, यह जानने का उनका प्रयास रहता था। व्यक्ति स्वभावतः दुष्ट है, व्यक्तिवादी है, ध्येयशून्य है, यदि ऐसा प्रतीत हुआ तो उसके साथ वे एकदम सख्ती का व्यवहार करते थे। गलती करने वाला व्यक्ति ध्येयवादी तो है, किंतु कुछ व्यक्तिगत दुर्बलताओं के कारण वह वैसा व्यवहार कर रहा है, ऐसा ध्यान में आया तो उसके साथ एकदम कठोर व्यवहार न करते हुए उसको प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से समझाकर या अन्य मार्ग से उन दुर्बलताओं से मुक्त होने में वे उसकी सहायता करने का प्रयास करते थे। ऐसे व्यक्ति को छूट (long rope) देने की उनकी तैयारी रहती थी। वे उसे ठीक ढंग से काम करने का एक और अवसर देने के पक्ष में रहते थे। उनका अनुभव ऐसा था कि अधिकतर लोग गलतियां इसलिए करते हैं कि उनको भारतीय मजदूर संघ की रीति-नीति, पद्धति, जीवनमूल्य आदि की जानकारी नहीं रहती। देश के सार्वजनिक जीवन में आज जो गलत धारणाएं, प्रथाएं, पद्धतियां और संकेत प्रचलित हैं उनको ही स्वाभाविक और प्रमाणभूत मानते हुए वे प्रामाणिकता से गलत व्यवहार करते हैं। यदि हमने शांत चित्त से धीरज के साथ उनको अपनी रीति-नीति, पद्धति की जानकारी दी तो

उसको समझकर वे तत्परतापूर्वक अपने व्यवहार में बदल भी कर लेते हैं। आवश्यकता उनको ठीक ढंग से और धैर्यपूर्वक समझाने की है। ऐसे कार्यकर्ताओं को समझाने में कितनी ही देर लगी तो भी उनका धैर्य टूटता नहीं था। बाहर से देखने वालों को कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता था कि बड़े भाई कभी तो एकदम गुस्सा करते हैं और कभी अतुलनीय शांति का परिचय देते हैं, यह क्या बात है ? इसका रहस्य उपरिनिदिष्ट प्रकार से बारीकी से मनोविश्लेषण करने की उनकी क्षमता में था। यह क्षमता उनको प्रदीर्घ शिष्यत्व और प्रशिक्षण (apprentice-ship) के कारण प्राप्त हुई थी।

भारतीय मजदूर संघ में प्रवेश करने के बाद कानपुर ही उनका केन्द्र रहा। वहां सभी कार्यकर्ताओं को प्रभावित करने वाले उनके गुण अर्थात् हर छोटे-बड़े काम के तफसील पर मजबूत पकड़ का अनुभव हुआ। वे हर समस्या की तह तक जाते थे। हवा में छलांग लगाने वाला स्वप्नदर्शी (युटोपियन) स्वभाव उनका नहीं था। वह सब बातों के विषय में सदा चौकस रहते थे। कानपुर के सुरक्षा संस्थानों में वर्षों से जमा हुआ श्री एस० एम० बनर्जी दादा का एकाधिकार कैसे समाप्त किया जाय, इण्टक को बढ़ावा देने वाले राज्यीय प्रशासन से मजदूर संघ के लिए प्रादेशिक स्तरीय मान्यता कैसे प्राप्त की जाए, लेनिन पार्क में श्री आइ० डी० सक्सेना की हत्या करने वालों की खोज कैसे की जाए, अंग्रेजी दवाओं का असर बालादीन की तबीयत पर नहीं हो रहा, क्या इसके लिए आयुर्वेदिक औषधि का प्रबंध करना चाहिए ? और संघ कार्यालय में रोटी पकाने वाले बहादुर की शादी का कुछ इंतजाम करना ही होगा। यज्ञदत्त शर्मा की पत्नी द्वारा पाले हुए कुत्तों के चक्कर से यज्ञदत्त को मुक्ति दिलाने का कोई मार्ग है क्या ? आदि सभी बातों पर एक ही समय युगपद, पूरा ध्यान। सभी विषयों की तफसील पर पूरी पकड़, केवल अपने व्यक्तिगत सुख के विषय को छोड़कर।

किसी की भी बात सुनते समय बड़े भाई कही हुई बात तो समझते ही थे, किन्तु समय-समय पर उस बात के पीछे बोलने वाले की मनःस्थिति और उसकी परिस्थिति का भी ठीक अंदाजा वे लगा सकते थे। अकारण बात को लम्बी बनाने वाले की बात, यदि दूसरा कोई अपरिहार्य कारण न रहा तो, वह बीच में काटते नहीं थे। चापलूसी या खुशामद से उन्हें नफरत थी। इसके कारण वास्तविकताओं को समझने में आने वाली कृत्रिम कठिनाई से वे मुक्त थे। एक ही घटना की ओर विभिन्न व्यक्ति अलग-अलग दृष्टि से देख सकते हैं। हर एक व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि, प्राप्त परिस्थिति में भूमिका, अन्य व्यक्तियों से समीकरण, अपने ढ़ग का हुआ करता है। इस कारण समान ध्येयनिष्ठा रखने वाले कार्यकर्ता एक ही घटना का प्रतिवृत्त अपनी-अपनी दृष्टि से अलग-अलग ढंग से दे सकते हैं। इसमें एक सही है, दूसरा झूठ या गलत है, यह बात नहीं आती। हर एक कार्यकर्ता सत्य ही बोलता है। सत्य का जिस तरह का दर्शन उसको हुआ होगा, वह वैसा बोलता है। उपरिनिदिष्ट कारणों से एक ही सत्य का दर्शन विभिन्न लोगों को विभिन्न प्रकार से होता है। इसलिए हर एक कार्यकर्ता की बात को वे या तो सही या गलत ऐसा नहीं मानते थे। वे मानते थे कि कार्यकर्ता ध्येयनिष्ठ है, वह झूठ नहीं बोलेगा, वह जो बोल रहा है वह उसके सत्य की वर्णना (version) है। इसी दृष्टि से उसकी बात को वह ग्रहण करते थे। ऐसा व्यक्ति कच्चे कान का हो ही

नहीं सकता। जीवन में विविध क्षेत्रों में प्रत्यक्ष कार्य करने वाला कार्यकर्ता होने के कारण उन्होंने पर्याप्त शिष्यत्व (apprenticeship) की थी। संघ कार्य की रगड़ में से वे गए थे। व्यक्तिगत जीवन भी विविध संपर्क तथा विविध खट्टे-मीठे अनुभवों से युक्त था। इस कारण उनकी मनोवैज्ञानिक समझदारी बहुत गहरी, ऊंची और वास्तविकतापूर्ण थी। इस तरह की रगड़ में से न जाते हुए किसी भी एकाध गुण प्रकर्ष के कारण आसानी से ऊंचा पद प्राप्त करने वाले व्यक्ति को यह लाभ प्राप्त नहीं हो सकता। परिस्थिति में जब उलझन पैदा होती है, एक ही क्षेत्र के समकक्ष कार्यकर्ताओं में अनबन पैदा होने के कारण जब समस्याएं खड़ी होती हैं, अच्छे कार्यक्षम कार्यकर्ता के स्वभाव के नुकीले कोने जब उसके सहकारी कार्यकर्ताओं को चुभने लगते हैं, बातचीत के गैर-जिम्मेवार ढंग के कारण अपने ही वृहत् परिवार में जब गलतफहमियां पैदा होती हैं, तब पता चलता है कि नेतृत्व की वास्तविक क्षमता रखनेवाला कौन है।

भारतीय मजदूर संघ का महामंत्री पद बड़े भाई के पास पारितोषिक के रूप में नहीं; आह्वान के रूप में आया था।

आपत्काल ने सभी नेताओं की अग्नि-परीक्षा की। तब तक माना जाता था कि जन-नेतृत्व के लिए एकमात्र आवश्यक गुण यानि लच्छेदार भाषण देने की क्षमता है। महाभारत-कालीन विराट-पुत्र उत्तर भी इस कला का धनी था। आपत्काल ने स्पष्ट किया कि नेतृत्व अपने आपमें स्वयं एक परिपूर्ण गुण है। "समग्र क्रान्ति" का जोशीला भाषण देनेवाले कई नेता इस कालावधि में "समग्र आत्मसमर्पण" तक पहुंच गए थे। युद्धकाल में ही स्पष्ट होता है कि चर्चिल और चेम्बरलेन में, मार्शल पेतॉं और दगॉल में कितना अंतर होता हैं। ट्रेड यूनियन क्षेत्र में यह परीक्षा अधिक तीव्रता से हुई। "अनुशासन पर्व" के नाम पर ट्रेड यूनियन के सारे अधिकार छीन लिए गए। आंदोलनों की बात तो दूर, ट्रेड यूनियन का नियमित कार्यालय चलाना भी कठिन हो गया था। उसके लिए भी कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार किया जाता था। ऐसे समय स्वघोषित क्रांतिकारी वामपंथी ट्रेड यूनियन नेताओं की भी मनःस्थिति डांवाडोल हो गई थी। सभी गैर-इण्टक यूनियनों ने एकत्रित आकर सरकार की श्रमिक विरोधी नीतियों का प्रगट विरोध करना चाहिए, यह सिद्धांत तो सर्वमान्य हुआ, किन्तु पहले ही पत्रक पर केन्द्रीय श्रम संस्थाओं के पदाधिकारियों के हस्ताक्षर या नाम रहें, या न रहें यह चर्चा का विषय हो गया। आज इस बात का स्मरण मनोरंजक प्रतीत होता है कि उस समय पत्रक पर किसी नेता का नाम नहीं था, केवल संस्थाओं के नाम थे। क्रांतिकारी वामपंथियों के कई नेताओं का यह हाल था। उनको क्रियाशील बनाने में मेरे जैसा 'प्रतिक्रियावादी' असफल रहा, यह आश्चर्य की बात नहीं। ट्रेड यूनियन क्षेत्र के उस समय के सबसे अधिक तपोवृद्ध नेता सीटू के मान्यवर श्री पी० राममूर्ति जी भी कई वामपंथी यूनियन नेताओं का हौसला बढ़ाने में सफल नहीं हो सके थे। ऐसे समय निर्भयतापूर्वक कार्य करना; पत्रक निकालना, दौरे करना, मजदूरों का हौसला बढ़ाकर उनको संघर्ष के लिए तैयार करना और साठ हजार से अधिक मजदूरों द्वारा कानून का भंग करवाना, यह सब कार्य अद्भूत ही था। भारतीय मजदूर संघ ने यह कार्य मान्यवर बड़े भाई के नेतृत्व में किया। उनके महामंत्रीपद के कार्यकाल का प्रारंभ ही "योद्धा नेता" के रूप में हुआ। भारतीय मजदूर संघ के अपने सभी सहकारियों को साथ में लेकर बड़े भाई इस अग्नि-परीक्षा में गौरवशाली ढंग से उत्तीर्ण हुए।

संस्कृति में सुभाषित है—

रत्नैर्महार्हैस्तुतुषुर्नदेवाः
न मेजिरे भीमविषेण भीतिम् ।
सुधां बिना न प्रययुर्विराम
न निश्चितार्थाद् विरमन्ति धीरः ॥

आपत्कालीन दमनचक्र के भीमविष के कारण भारतीय मजदूर संघ विचलित नहीं हुआ । किन्तु आपत्काल की समाप्ति के बाद यह देखा गया कि जो संकट की अवस्था में बहादुरी से लड़ सकते हैं ऐसे वीर पुरुष अनुकूल काल के प्रलोभनों का शिकार भी बन सकते हैं । जनता राज आने के पश्चात अच्छे-अच्छे लोग और संगठन भी इस तरह की मनःस्थिति में आ गए । कहा गया है कि विजयकाल ही प्रमादकाल होता है । राज्य परिवर्तन के पश्चात् अवसरवादी सस्ती नेतागिरी का प्रभाव एकदम बढ़ गया । मजदूरों के लिए यह सौभाग्य की बात थी कि तत्कालीन केन्द्रीय श्रम मंत्री मान्यवर श्री रवीन्द्र वर्मा इस सस्ती श्रेणी के नहीं थे । इस कारण कुछ अच्छी बातें उस अवधि में हो सकीं । किन्तु कुल मिलाकर शोरगुल अधिकतर सस्ती नेतागिरी (demagogy) का ही था और इस कारण ट्रेड यूनियन क्षेत्र में भी विलीनीकरण का सुझाव आया ताकि इस तरह विलीनीकृत केन्द्रीय श्रम संस्था जनता सरकार के साथ उसी तरह सम्बद्ध रहे, जिस तरह इण्टक कांग्रेस सरकार के साथ रही । यह बहुत बड़ा प्रलोभन था । किन्तु भारतीय मजदूर संघ ने दृढ़ता से इंकार किया । यह निर्णय करने का काम बड़े भाई के नेतृत्व में हुआ, और विशेषता यह थी कि यह निर्णय एकमत से हुआ । भारतीय मजदूर संघ का एक भी कार्यकर्ता राजाश्रय की मेनका के मोह में विश्वामित्र की मनःस्थिति में नहीं आया । ऐसे कार्यकर्ताओं का नेतृत्व बड़े भाई कर रहे थे । आपत्काल में प्रकट हुई वीरता तो श्रेयष्कर थी ही किन्तु अनुकूल परिस्थिति में प्रकट हुई यह निर्मोहिता उससे भी अधिक श्रेय देने वाली रही । इस कालखण्ड की विशेषता एक विद्वान लेखक ने वर्णन किया था कि First class problems confronting second class leadership." किन्तु यह वर्णन भारतीय मजदूर संघ को लागू नहीं हो सका । उस पूरी अवधि में मजदूर संघ की बागडोर बड़े भाई के हाथ में थी ।

थॉमस कार्लाईल का विभूतिवाद और हर्बर्ट स्पेंसर का जनसाधारणकृत रचनात्मक प्रयत्नवाद, दोनों अपने आप में सत्य हैं, किन्तु दोनों अर्धसत्य हैं । परस्परावलम्बन से ही दोनों मिलकर इस विषय के संदर्भ में पूर्ण सत्य का निर्माण कर सकते हैं ।

एक साहित्यिक ने कहा कि संसद द्वारा नियुक्त की हुई किसी उपसमिति के द्वारा 'हेम्लेट" जैसी कृति का निर्माण नहीं हो सकता । उसके लिए प्रतिभाशाली लेखक आवश्यक है । दूरदृष्टि से भविष्य में सोचते हुए अपने ध्येय की सिद्धि के लिए वर्तमान में जनसाधारण को अप्रिय प्रतीत होने वाले निर्णय करने और उन पर दृढ़ रहने का कार्य संसदीय उपसमिति के लोग नहीं कर सकते । 'इण्डिया' की ओर जलप्रवास अंतहीन प्रतीत होने के कारण असन्तुष्ट तथा निराश हुए साथियों के दबाव में कोलम्बस नहीं आये । वाटरलू की प्रत्यक्ष लड़ाई के पूर्व

फ्रेंच सेना के आघातों से उत्तेजित अपने साथियों को ७२ घंटे तक नियंत्रित रखने का कठिन कार्य ड्यूक ऑफ वेलिंग्टन ने किया। अफजलखान के द्वारा सब तरह का सार्वजनिक अपमान सहन करते हुए भी शिवाजी ने उत्तेजित होकर अपना पहाड़ी क्षेत्र नहीं छोड़ा। संकट के समय यह संयम (Comportment under fire) जनसाधारण से अपेक्षित नहीं। न ही अपेक्षित है वह दूरदृष्टि और दृढ़ता जो सभी श्रेष्ठ पुरुषों ने निरपवाद रीति से प्रकट की है।

किन्तु इसका दूसरा पहलू भी विचारणीय है। ऐसे महापुरुष कभी भी और कहीं भी हठात् निर्माण नहीं होते। समकालीन सामान्य जनों से उनका स्तर हर तरह से बहुत ऊँचा रहता होगा। किन्तु किसी भी श्रेष्ठ पुरुष का निर्माण करने की बीजीभूत संभावनाएं उसके देश की भूतकालीन श्रेष्ठ परम्परा और संस्कृति में सुप्तावस्था में निहित रहती हैं। ऐसी परम्परा विद्यमान न रही तो कोई भी महापुरुष एकदम शून्य में से अवतीर्ण नहीं हो सकता। समकालीन जनसाधारण का स्तर कितना ही गिरा हुआ क्यों न रहे, किन्तु उनको ही सुयोग्य साधन-माध्यम बनाकर श्रेष्ठ पुरुष अपने कार्य को सिद्ध करते हैं। ऊपरिनिर्दिष्ट बीजीभूत संभावना का समाज में अभाव रहा तो जनसाधारण श्रेष्ठ कार्य का वाहक बन ही नहीं सकता। तीन शताब्दियों तक साधु-संतों द्वारा जनजागरण का कार्य न होता तो महाराष्ट्र में हठात् शिवाजी का उदय न होता। वैसे ही, अन्य परिस्थितियां समान रहते हुए, शिवाजी का निर्माण न होता तो तानाजी मालुसरेकी पीढ़ी से लेकर धनाजी जाधव की पीढ़ी तक दक्षिण में सामान्य जनों को असामान्य बनाने की जो प्रक्रिया चल पड़ी वह कदापि न चल पाती। परम्परा की बीजीभूत संभावना से परिस्थिति ओतप्रोत होने के कारण सामान्य व्यक्तियों में असामान्य कर्तृत्व जागृत करने का कार्य शिवाजी कर सके। ऐसे व्यक्ति शिवाजी के कार्य के समर्थ साधन बनने के कारण शिवाजी की मूल श्रेष्ठता और भी अधिक चमक उठी।

जो दूध घना नहीं होता उसमें से घनी मलाई की अपेक्षा नहीं की जा सकती। परम-पूजनीय डाक्टर जी राष्ट्र पुनर्निर्माण कार्य में श्रेष्ठ विभूतियों के योगदान का महत्व जानते थे। किन्तु उन्होंने यह निश्चय किया था कि संस्कारों के माध्यम से वे सामान्य जनों में से हर एक व्यक्ति को असामान्य बनाएंगे, ताकि अपने भविष्य के लिए दो-चार विभूतियों पर ही अवलम्बित रहने की बारी समाज पर न आए। निराशामय स्थिति में श्रेष्ठ नेता का निर्माण जैसे आशा का कारण होता है वैसे ही उसी पर अवलम्बित रहने की आदत उससे भी गहरी निराशा में समाज को डाल सकती है। घने अंधेरे में बिजली चमकी तो एकदम प्रकाश का आनंद मिलता है, लेकिन बिजली लुप्त होने के बाद अंधेरा पहले से भी अधिक घना प्रतीत होता है। ध्येयसिद्धि की दृष्टि से यह प्रक्रिया श्रेयष्कर नहीं, ऐसा पूजनीय डाक्टर जी मानते थे। इस कारण उन्होंने दूसरा मार्ग अपनाया।

श्रेष्ठ परम्परा के आधार पर श्रेष्ठ नेता का निर्माण होता है, उसी आधार पर नेता सामान्य साथियों में से असामान्य कार्यकर्ताओं का निर्माण करता है। नेता कार्यकर्ताओं की शक्ति बढ़ाता है, कार्यकर्ता नेता की शक्ति बढ़ाते हैं, और दोनों मिलकर अंगीकृत कार्य की शक्ति बढ़ाते हैं। यह प्रक्रिया काव्यप्रकाश की निम्न पंक्ति का स्मरण दिलाने वाली है—

कमलेन सर : सरसा कमलम्, सरसाकमलेन विभाति वनम् ॥

—कमल सरोवर की, सरोवर कमल की, और कमल-सरोवर दोनों मिलकर वन की शोभा बढ़ाते हैं।

बड़े भाई में मनुष्य निर्माण की क्षमता बहुत बड़ी मात्रा में थी। मान्यवर बड़े भाई के कारण उनके कार्यकर्ताओं की, कार्यकर्ताओं के कारण मान्यवर बड़े भाई की और दोनों के कारण भारतीय मजदूर संघ की शोभा सतत बढ़ती गई। इस प्रक्रिया का आधार रहीं हमारी सनातन संस्कृति की बीजीभूत संभावनाएं। यह अन्योन्याश्रय ध्यान में न रहा तो सत्य स्थिति का समग्र दर्शन हो नहीं सकता।

पंडित दीनदयाल जी के निर्वाण के पश्चात उनको श्रद्धांजलि समर्पित करते समय एक जनसंघ नेता ने कहा था कि पंडित जी ने हम लोगों को एम०एल०ए०, एम०पी०, मिनिस्टर बनाया; किन्तु वे स्वयं कुछ भी नहीं बने। ट्रेड यूनियन के क्षेत्र में इसी तरह के प्रतिष्ठा प्राप्ति के अवसर अन्य रूप में आते हैं। विदेश यात्राएं, सरकारी तथा अन्य समितियों में नियुक्तियाँ, आदि। ऐसे सभी अवसरों पर बड़े भाई एक-एक करके अन्य कार्यकर्ताओं को आगे बढ़ाते थे, स्वयं को सबसे पीछे रखते थे।

अनुशासन का अर्थ तो सब समझते हैं, किन्तु आत्मानुशासन का मतलब लोगों के ध्यान में आसानी से नहीं आता। बड़े भाई अनुशासित भी थे और आत्मानुशासित भी। अनुशासन बाहर से आता है, आत्मानुशासन भीतर से। संस्था के संवैधानिक अनुशासन का सीधे उल्लंघन न करते हुए ऐश और आरामपरस्ती का जीवन व्यतीत करना असंभव नहीं है। संयम, चारित्र्य, उद्यमशीलता, कर्मठता आदि गुण संविधान के प्रभाव से निर्माण नहीं हो सकते। शायद इसी कारण आजकल यह कहने का फैशन हो गया है कि नेता का मूल्यांकन उसके सार्वजनिक जीवन के आधार पर करना चाहिए न कि व्यक्तिगत जीवन के आधार पर। नेता के व्यक्तिगत जीवन से जनता का क्या लेना-देना? वह तो उसका निजी मामला है। यह 'प्रगतिशील' दृष्टिकोण बड़े भाई ने नहीं अपनाया था। किसी भी सम्बन्धित संगठन के संविधान में जिनका अप्रत्यक्ष रूप से भी उल्लेख नहीं, ऐसे कितने ही बंधन उन्होंने स्वयं अपने ऊपर डाल लिए थे। कार्यकर्ताओं को प्रेरणा देने वाली दैनिक जीवन की उनकी कर्मठता संविधान के नहीं, आत्मानुशासन के कारण निर्माण हुई थी। विधान परिषद् के सदस्य के नाते प्राप्त होने वाला मानधन किस तरह से खर्च करना चाहिए, इस विषय में किसी भी संगठन ने उनके ऊपर कोई बंधन नहीं डाला था। न ही किसी संविधान की किसी धारा में यह आदेश था कि विधायक के मानधन का पूरा हिसाब विधायक को संगठन को देना चाहिए। किन्तु बड़े भाई पूरा मानधन भारतीय मजदूर संघ के काम के लिए ही खर्च करते थे और विधायक के नाते प्राप्त होने वाले पूरे पैसे का हिसाब भारतीय मजदूर संघ के अधिवेशन के सामने प्रस्तुत करते थे। एक समय उनकी पत्नी को उसकी बीमारी के कारण कुछ सप्ताह के लिए उनके

साथ लखनऊ में रहना पड़ा। उस समय श्रीमती भाभी के दवा-पानी, यातायात और भोजन का सारा खर्चा उनके गांव बगही से लाकर, निजी सम्पत्ति से किया गया। मानधन का एक पैसा भी इस काम में नहीं लगाया गया। इस कर्मठता का कहीं प्रोपैगंडा भी नहीं किया गया। इस कर्मठता के कारण ही उनकी वाणी में नैतिक अधिकार उत्पन हुआ था।

आत्मानुशासन,

अपने ही हाथ से अपनी रस्सियां काट डालना।

अपने ही हाथ से अपने जहाज, अपने पुल जला डालना।

इसकी प्रेरणा बड़े भाई के जीवन से कार्यकर्ताओं को प्राप्त होती थी।

संघ प्रचारक के नाते जिस विभाग में बड़े भाई ने काम किया था उस विभाग में बड़े भाई के साथ प्रवास करने का मौका कई बार आया। उस समय ध्यान में आया कि बड़े भाई की कृतज्ञताबुद्धि बहुत ही दृढ़ थी। जिस-जिस ने उनको कभी प्रेम दिया होगा, उस-उस को वे हमेशा कृतज्ञता भाव से याद करत थे। आधुनिक रीति तो यही है कि जिस समय जिसका उपयोग करना हो, उस समय उसकी पूरी चिंता करना; और जैसे ही उसकी उपयोगिता समाप्त हो जाय, उसको तुरन्त झटक देना—ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार नींबू को पूरी तरह से निचोड़ लेने के बाद फेंक दिया जाता है। किन्तु बड़े भाई का स्वभाव इसके बिल्कुल विपरीत था। उनके प्रेम में गणित और हिसाब-किताब नहीं था। यह उनका सहज स्वभाव था कि एक क्षण के लिए भी यदि किसी ने आत्मीयता का व्यवहार किया हो तो उसका स्मरण आजीवन रखना। इस कृतज्ञता भाव के कारण पुराने संपर्कों में से किसी को भी वे भूलते नहीं थे। फिर वह रेणुकूट का सेवाराम हो, या वाराणसी का मन्नालाल हनुमान जी। मानवीय संबंधों में उपयोगितावाद को ग्रहण करने में बड़े भाई पूरी तरह असफल रहे। इसके कारण प्रत्यक्ष कार्य के साथ-साथ अन्य व्याप भी उनको बहुत संभालना पड़ता था। उनकी वृत्ति थी—"नेहा लगा के पछताना क्या"।

अन्तिम बीमारी में उनके मन में एक मात्र विचार कार्य का ही रहता था। कभी स्वप्न में भी बोलते थे तो वह बात कार्य से संबंधित ही हुआ करती थी। व्यक्तिगत या पारिवारिक जीवन की बात उनके मन में उस अवस्था में भी कभी नहीं आई। डा० मुले जी को वे कहते थे कि, "मैं मृत्यु की चिंता नहीं करता, किन्तु मेरी इस हालत के कारण भारतीय मजदूर संघ का काम मैं नहीं कर पा रहा हूं, इसी का खेद हो रहा है।" बीमारी का प्रथम चरण समाप्त हुआ। हालत कुछ सुधर गई। थोड़े दिन के लिए अपने गांव जाने की अनुमति उनको मिल गई। अनुमति देते समय डाक्टरों ने कहा था कि पूर्ण विश्राम करना होगा। काम के बारे में सोचना भी नहीं चाहिए। किन्तु यह शर्त पूरा करना बड़े भाई के लिए संभव नहीं

हुआ। उत्तर प्रदेश में कार्य की स्थिति कैसी है, उसमें कहां—क्या सुधार करने की आवश्यकता है, इस दृष्टि से सोचना और हलचल करना उन्होंने तुरन्त प्रारम्भ कर दिया। परिणाम जो निकलना था वही निकला। इस विषय में किसी ने रोका तो वे कहते थे कि "कार्य से अलग होकर आराम ही करना है तो जीवित रहना काहे के लिए ?"

संघ परिवार की अन्यान्य संस्थाओं के कार्यकर्ताओं के साथ उनके सम्बन्ध बहुत सौहार्दपूर्ण रहते थे। भारत की राष्ट्रशक्ति की सर्वंकष व्यूह-रचना का एक मोर्चा इस नाते वे भारतीय मजदूर संघ का महत्व मानते थे। सभी के कार्यकर्ताओं को यथाशक्ति प्रोत्साहन तथा सहायत देना वे अपना कर्त्तव्य समझते थे। एकाध बार एकाध व्यक्ति की विकृति के कारण कटु अनुभव आया तो भी उनका मन विचलित नहीं होता था। एक बार एक नेता द्वारा बताया हुआ काम बड़े भाई ने अपनेपन की भावना से कर दिया। बाद में उनको पता चला कि उस नेता ने कुछ मित्रों के पास ऐसी बड़ाई मारी कि, "क्यों ? कैसे बनाया बड़े भाई को ? निकाला कि नहीं उनसे अपना काम ?" किन्तु यह मालूम होने के बाद भी बड़े भाई की समन्वयी वृत्ति में अंतर नहीं आया। कहने लगे, "जाने दीजिए। आदमी का कद ही छोटा है, ऊंचे स्टूल पर खड़ा किया गया है, किन्तु इससे आदमी की असली ऊंचाई तो नहीं बढ़ती।" तत्पश्चात् भी उन नेता महोदय के साथ उनका व्यवहार पूर्ववत् चलता रहा। वे सोचते थे कि हम किसी व्यक्ति विशेष के लिए नहीं, अपितु अपने बृहद् परिवार के लिए काम कर रहे हैं।

अपने विरोधी खेमे के ध्येयनिष्ठ कार्यकर्ताओं के विषय में भी उनके मन में स्नेह का भाव रहता था। उनकी ध्येयनिष्ठा का वे सम्मान करते थे। सैद्धांतिक विरोध करते हुए भी व्यक्तिगत स्तर पर उनकी सहायता करने की उनकी प्रवृत्ति थी। जहां तक मजदूरों के दुःख दर्द का सवाल है, मजदूर भारतीय मजदूर संघ विरोधी यूनियन का कार्यकर्ता क्यों न हो, वह संकट में है तो उसकी सहायता करना वे अपना कर्तव्य मानते थे। विरोधी नेताओं की भी असली योग्यता अपने साथियों को बतानी चाहिए, इस मत के वे थे। आत्मस्तुति-परनिंदा की आदत रखने वाले उनके कुछ मित्रों को यह अच्छा नहीं लगता था; तो भी बड़े भाई कहते थे कि विरोधियों के बारे में ओछी, हल्की टीका-टिप्पणी करने से अपना ही स्तर गिरता है।

बड़े भाई के समकालीन विधान परिषद् सदस्य तथा उत्तर प्रदेश विधान परिषद् के रेकार्ड इस मत की पुष्टि करते हैं कि यदि बड़े भाई ने उधर चित्त एकाग्र किया होता तो वे अच्छे संसदज्ञ (पार्लियामेंटेरियन) के नाते चमक सकते थे। लोकतंत्र में "पार्लियामेंटेरियन" एक अच्छा कैरियर माना जाता है। किन्तु भारतीय मजदूर संघ की जिम्मेवारी के कारण वे अधिक ध्यान नहीं दे सके। भारतीय मजदूर संघ ने उनका कैरियर नष्ट किया। संगठन की जिम्मेवारी आंखों से ओझल कर या दूसरों को सौंपकर अपने व्यक्तिगत कैरियर के पीछे पड़ने की चतुराई बड़े भाई में नहीं थी। यह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की परम्परा के अनुकूल ही था। संघ ने भी अनेकानेक स्वयंसेवकों का कैरियर 'खराब' किया है। कौन नहीं जानता कि संघ के चक्कर में न आते तो मा० यादवराव जोशी एक संगीतज्ञ के नाते ख्याति प्राप्त कर सकते थे। मा० विट्ठलराव पतकी क्रिकेट पटु और मान्यवर रज्जू भैया एक विशिष्ठ

वैज्ञानिक के नाते विख्यात होते। बड़े भाई ने इसी परम्परा का निर्वाह किया।

पश्चिम में और उसका अनुकरण करने के कारण अपने देश में भी, श्रद्धांजलि समर्पित करते समय यह कहने की प्रथा है कि "उनकी मृत्यु के कारण अपूरणीय (irreperable) हानि हुई है। वैसे भी, मूल्यांकन के मापदंड भौतिकतावादियों के अलग हुआ करते हैं और अन्यों के अलग। भौतिकतावादियों की यह मान्यता है कि जिसके निधन के कारण होने वाली क्षति की पूर्ति हो ही नहीं सकती वह श्रेष्ठ। उन्हें बारबार प्रायः यह अनुभव आता भी है। विशुद्ध भौतिकतावाद व्यक्तिवाद और पदलिप्सा को जन्म देता है। व्यक्ति को स्वकेन्द्रित बना देता है। मेरी मृत्यु के बाद प्रलय (After me, the deluge) की भावना निर्माण करता है। ऐसा व्यक्ति हमेशा भयग्रस्त और असूयाग्रस्त रहता है। मेरे सहकारियों में से या अनुयायियों में से यदि किसी का व्यक्तित्व अधिक विकसित हुआ तो वह मुझे कहीं अपदस्थ न कर दें, इस प्रकार से विचार करने वाला व्यक्ति सहकारियों के विकास को प्रोत्साहन नहीं देता। नेतृत्व की द्वितीय पंक्ति निर्माण नहीं होने देता ताकि वह हमेशा के लिए अपरिहार्य (Indispensable) बना रहे। परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु के कारण होने वाली क्षति अपूरणीय ही हुआ करती है। भौतिकतावाद से मुक्त लोग ऐसे नेता को कनिष्ठ स्तर का मानते हैं। उनकी मान्यता रहती है कि श्रेष्ठ नेता वह है जो अपनी चिरंतन अनुपस्थिति के कारण होने वाली क्षति की पूर्ति की व्यवस्था पहले ही करके रखता है। संगठन में कभी शून्य पैदा न हो, इसकी योजना करता रहता है। ऐसे नेताओं के सोच-विचार का ढंग हुआ करता है —"मैं नहीं, तू ही"। उनके व्यवहार का ढंग भी भिन्न हुआ करता है। जीसस क्राइस्ट ने अपने शिष्यों को कहा था, "मेरी तुलना में अधिक श्रेष्ठ कार्य तुम लोग करोगे"। कान्फ्यूसिअस ने अपने शिष्यों को आश्वासन दिया था कि उसकी श्रेष्ठता के वे भी भागीदार हैं। संत ज्ञानेश्वर के गुरूदेव तथा प्रेरणा-स्रोत संत निवृत्तिनाथ मुमुक्षुओं के लिए दीप प्रज्वलन का कार्य स्वयं कर सकते थे। किन्तु वह कार्य तथा उसका श्रेय उन्होंने ज्ञानेश्वर को दिया। पूजनीय श्री गुरूजी ने कहा, "आप में से जिसने पूजनीय डाक्टर हेडगेवार जी को नहीं देखा, वह (उस समय के माननीय) बालासाहब देवरस को देख लें"। इस उक्ति-कृति का सारा ढंग ही अलग है। प्रयास दूसरों को छोटा दिखाने का नहीं, अपने से भी बड़ा बनाने का, ताकि पुण्यकार्य की गंगा कहीं रुक न जाय। बड़े भाई इसी परम्परा में पले थे। उनके निधन के कारण भारतीय मजदूर संघ की, मजदूरों की, राष्ट्र की हानि हुई है,वह हानि अपरिमित है, किन्तु अपूरणीय नहीं। इसी में बड़े भाई की श्रेष्ठता है।

ऐसे ध्येयवादी जीवन के संस्मरणों की दहलीज पर हम खड़े हैं। यहां से आगे भी बढ़ सकते हैं, वापस भी लौट सकते हैं। आगे बढ़ना खतरे से खाली नहीं है।

ध्येयवादी जीवन के संपर्क से मन में ध्येयवाद निर्माण होने की संभावना रहती है।

और फिर—

"लाली तेरे लाल की, जित देखो तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल॥"

यह खतरा है।

एक श्रीमान् युवक उपदेश के लिए जीसस के पास पहुंचा। जीसस ने कहा—

"Give up thy riches, take thy cross and follow me."

(अपनी धन सम्पत्ति त्याग दो, अपनी शूली उठाओ और मेरे पीछे चलो)। किन्तु वह युवक पागल नहीं था।

उसने जीसस की ओर पीठ किया और सीधे अपने मकान की ओर चल पड़ा।

हमारे लिए भी पागल बनना बाध्यता नहीं है।

हम यहां से आगे भी बढ़ सकते हैं, वापस भी लौट सकते हैं। हम दहलीज पर खड़े हैं।

—दत्तोपंत ठेंगड़ी